VIDYA - A JOURNAL OF GUJARAT UNIVERSITY

Peer-Reviewed, Multidisciplinary & Multilingual Journal

ISSN: 2321-1520 **E-ISSN:** 2583-3537

प्रत्ययों की विवेचना

Jayashree Thakkar

School of Language, Gujarat University, Ahmedabad
Address: Patanjali Arogya kendra, vadi road, deesa, Gujarat, pin - 385535
Phone – 9106370424, email id – jaythakkar6788@gmail.com

विषयप्रवेश

पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के प्रथम पाद से पञ्चम अध्याय की परिमाप्ति तक सर्वविध प्रत्ययों का अन्वाख्यान किया है। अष्टाध्यायी के प्रथम दो अध्यायों में आचार्य ने पद और पदसमूहों का संकलन एकत्रित किया है। प्रथम अध्याय में सामान्य पदों का तथा द्वितीय अध्याय में विशेष पदों के संकलन के पश्चात् तृतीय अध्याय में उन संकलित पदों का विश्लेषण अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय का विभाजन किया है, जो सर्वथा औचित्य प्राप्त है। **क्योंकि प्रत्ययविधि पदसापेक्ष है इसलिए पद संकलन के अनन्तर प्रत्ययविधि का अन्वाख्यान सर्वथा समुचित है ।**[1]

पद में प्रत्ययार्थ की प्रधानता स्वीकृत की जाती है।[2] अतः प्रत्ययों का अन्वाख्यान व्याकरण में प्राप्त करता है। इसलिए प्रत्यय सदा प्रकृतिसापेक्ष है। इसीलिए प्रत्यय के उल्लेख से ही प्रकृति का अवगम अविनाभाव सम्बन्ध से सर्वथा सिद्ध हो जाता है। **आचार्य पाणिनि ने तृतीय अध्याय का प्रथम सूत्र "प्रत्ययः" रखा है।**[3]

प्रत्ययों का परिचय ।

समस्त पदों का मूल धातु है।[4] प्रयोग की दृष्टि से धातुएँ दो प्रकार की होती है- मौलिक तथा कृत्रिम । **भू, गम्** इत्यादि मौलिक धातुएँ है, जिनका संग्रह आचार्य ने धातुपाठ में किया है । उन धातुओं में तिबादि प्रत्ययों को जोड़कर मौलिक क्रियारूप बनाये जाते हैं । कृत्रिम धातुएँ वे हैं जिनको मूल धातु में प्रत्यय जोड़कर सिद्ध किया जाये, जैसे- भू धातु से बुभूषु, गम् धातु से जिगमिष् आदि शब्दों को सिद्धि होती है। उपर्युक्त उभयविध धातुएँ कृदन्त शब्दों का मूल है। मूल धातुओं का विवरण धातुपाठ में स्वतन्त्र रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इसलिए कृत्रिम धातुओं के निष्पादक प्रत्ययों का विवरण तृतीय अध्याय में सबसे पहले किया गया है। इसलिए अन्वाख्यान प्रक्रिया की दृष्टि से **सन्, यङ्, क्यङ् तथा क्यच्** प्रत्ययों का प्रथम स्थान है। **सनादि प्रत्यय धात्वांशभूत प्रत्यय कहे जाते हैं।**[5] इसलिए धात्वंशभूत इन प्रत्ययों का विवेचन आचार्य पाणिनि ने तृतीय अध्याय के प्रथम पाद के प्रारम्भ में ही करना उचित समझा । इन प्रत्ययों के भी दो प्रकार देखने में आते हैं। प्रथम तो मूलभूत धातुओं से कृत्रिम धातुरूपों का निर्माण करते हैं। वैसा एकमात्र प्रत्यय **"सन्"**।[6] दूसरे **क्यच्, क्यङ्, क्यष्, काम्यच्, णिङ् और णिच्** ऐसे प्रत्यय हैं, जो नाम से धातुरूपों का निर्माण करते हैं। यथा पुत्र से **पुत्रीयति (पुत्र+क्यच्), पुत्रकाम्यति (पुत्र+काम्यच्)** इत्यादि । **काकः श्येनायते (श्येन+ क्यङ्) ,लोहितायते (लोहित+क्यष्) नमः करोति नमस्यति (नमस्+क्यच्) इत्यादि।**

इसमें तीसरी श्रेणी के प्रत्यय वे हैं जो धातु में लगकर क्रियाविशेषणभूत अर्थ को भी अपने में कर लेते हैं। यथा-पुनः पुनः पचति पापच्यते (पच्+यङ्) ,कुटिलं क्रामति चंक्रम्यते (क्रम+ यङ्) ,गर्हितं लुम्पति लोलुप्यते इत्यादि। अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के प्रथम पाद के 32 वें से सूत्र पर धात्वंशभूत कृत्रिम धातु-निष्पादक, नामधातु-निष्पादक तथा क्रियाविशेषण- संग्रहक प्रत्ययों का अन्वाख्यान समाप्त हो जाता है।

सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्ययों की समीक्षा।

इसके पश्चात् विवरण नामक विशिष्ट प्रकार के प्रत्ययों का विवरण प्रारम्भ होता है । **क्योंकि विकरण प्रत्ययत्वात् धातु से परे होते हैं।**[7] तथा कृत् प्रत्ययों के पहले इन विकरणों का उपन्यास सर्वथा समुचित है। इन विकरणों का भी दो प्रकार हैं- **1. आर्धधातुक 2. सार्वधातुक** ।

आर्धधातुक विकरण स्य, सिच्, क्स आदि हैं तथा सार्वधातुक विकरण शप्, श, श्यन् ,श्ना आदि हैं।[8] क्योंकि सार्वधातुक विकरण **बहिरंग** हैं और आर्धधातुक विकरण **अन्तरंग** हैं, इसलिए आर्धधातुक विकरण के बाद सार्वधातुक विकरण का व्याख्यान किया गया है। यद्यपि मूलधातु और नामधातु में तिबादि प्रत्ययों को जोड़ने से धातुरूप बनते हैं, पुनरपि विकरणों को लगाए बिना क्रियारूपों का निर्माण कदापि नहीं हो सकता और न तो उनकी गणमूल विशिष्टताओं का ही ज्ञान हो सकता है। इसलिए विकरण प्रत्ययों का धातुरूप निर्माण में विशिष्ट स्थान है। यहाँ सौविध्य के लिए उभयविध विकरणों की सूची अपेक्षित है।

सार्वधातुकविकरण	आर्धधातुकविकरण
शप्, श्यन्, श्नु, श	स्य, तास्, सिप्

[1] पदनिमित्तात् प्रत्ययविधेः - प्रदीप-3/1/92

[2] प्रकृतिप्रत्ययार्थयोः प्रत्ययार्थस्यैव प्राधन्यम् - प.ल.मं. - धत्वर्थविचार।

[3] अष्टा.-3/1/1

[4] (क) धातूनां सर्वमूलत्वात्-शब्देन्दुशेखर-3/1/71, (ख) अथ सकलशब्दमूलभूत्तवाद्धात्वर्थो निरूप्यते- प.ल.म.-धत्वर्थविचार।

[5] सनाद्यन्ता धातवः-अष्टा. 3/1/32

[6] अष्टा.-3/1/5

[7] अष्टा.-3/1/2

[8] अन्तरंगाः स्यादयः। काऽन्तरंगता? लावस्थायामेव स्यादयः। सार्वधतुके श्यन्नादयः-म.भा.-3/1/33

http://vidyajournal.org

VIDYA - A JOURNAL OF GUJARAT UNIVERSITY

Peer-Reviewed, Multidisciplinary & Multilingual Journal

ISSN: 2321-1520 **E-ISSN:** 2583-3537

श्नम्, उ, श्ना	आम्, कृञ्, लृट्
शानच्, शायच्	सिच्, क्स्, चङ्, अङ्, चिण्,यक् ।

कृत् तथा कृत्य प्रत्ययों का विवेचन।

कृत् प्रत्ययों की प्रकृतिभूत सामग्री का विवरण कर चुकने के बाद **3/1/91 सूत्र में** धातु से नाम विशेषण-निष्पादक प्रत्ययों का विवरण प्राप्त होता है। कृत् प्रत्यय के मुख्यतः दो भेद हैं - **1. कृत् । 2. कृत्य ।**

कृत्य प्रत्यय संख्या में अल्प हैं, अत: **सूचीकटाहन्याय** से पहले कृत्य प्रत्ययों का ही अन्वाख्यान आचार्य ने किया है। कृत्य प्रत्यय निम्नलिखित हैं- **तव्यत् तव्य, अनीयर्, यत्,क्यप् और ण्यत्।**[9] इन प्रत्ययों के सम्बन्ध में कुछ तथ्य ज्ञातव्य हैं। ये प्रत्यय सकर्मक और अकर्मक रूप-प्रकृति- भेद से क्रिया तथा कारक दोनों के वाचक होते हैं। किन्तु कृत् प्रत्यय सदैव कारकवाचक ही होते हैं । सम्भवतः इसी कारण से कृत् प्रत्ययों के कृत्य नामक एक अवान्तर भेद की कल्पना **पाणिनि** को ही करनी पड़ी। और सम्भवतः कृत्यसंज्ञक उपर्युक्त प्रत्ययों में यकार के साधारण होने के कारण ही उनका नामकरण भी ऐसा किया गया है।

कृत्य प्रत्यय भाव और कर्म में ही विहित होते हैं।[10] **किन्तु कृत् प्रत्यय विशेषतया कर्ता में होते हैं।**[11] **कृत्यसंज्ञक प्रत्ययों की एक और विशेषता यह है कि वे भावकर्मातिरिक्त कारकान्तर में भी होते हैं।**[12] **कृत्य प्रत्ययों का विधान कालानुसार नहीं किया गया है जबकि कृत् प्रत्ययों का विधान कारकानुसार और कालानुसार किया गया है।**[13] कृत्य प्रत्यय **द्रव्य**[14] के अभिधायक होते हैं। वह द्रव्य द्विविध होता है- क्रियारूप तथा कारकरूप । कारकरूप द्रव्य का अभिधान कृतः, कर्त्ता और कारक इत्यादि में होता है तथा क्रियारूप द्रव्य अभिधान **पाकः, पङ्क्ति** इत्यादि में होता है। कृत् प्रत्यय से कारक का अभिधान होने पर भी उसकी प्रकृति तो क्रिया का ही अभिधान करती है। **और क्रिया सदैव काल सापेक्ष होती है ।**[15] इसलिए प्रत्ययों के कारण विशेष में विहित होने पर भी उनका कालानुसारी व्याख्यान समीचीन है।

द्वितीय पाद में भूतकालिक और वर्तमानकालिक प्रत्ययों का अन्वाख्यान किया गया है। तदनन्तर तृतीय पाद के तृतीय सूत्र **"भविष्यति गम्यादयः"**[16] से भविष्यकालिक प्रत्ययों का अन्वाख्यान प्रारंभ होता है।समानकर्तृक धातु से पूर्वकाल में होने वाले प्रत्ययों का अन्वाख्यान चतुर्थ पाद में किया गया है । पूर्वोक्त पूर्वकालिक प्रत्यय सोपपद और निरुपपद द्विविध हैं । **क्त्वा प्रत्यय निरुपपद और सोपपद उभयविध धातुओ से होता है।**[17]

धातु से होने वाले प्रत्ययों के दो भेद -

1. कृत् 2. तिङ्।

तिङ् प्रत्यय धातु से प्रत्ययों की भांति साक्षात् नहीं होते, वे लादेश प्रत्यय हैं। पाणिनि ने धातु से होने वाले कृत नामधेय प्रत्ययों का अन्वाख्यान **धाराप्रवाहन्यायेन** किया है। यह भी सत्य है कि साक्षात् धातु से होने वाले तिबादि प्रत्ययों के स्थानी लडादि प्रत्ययों का अभिधान भी उन्हीं प्रत्ययों के बीच - बीच में प्रसंगानुसार किया गया है । किन्तु लादेश तिबादि प्रत्ययों का अन्वाख्यान तृतीय अध्याय के चतुर्थ पाद के अन्त में किया गया है, जो सामान्य से विचारने पर असम्बद्ध-सा प्रतीत होता है। किन्तु पाणिनि की प्रकरण योजना की वैज्ञानिकता को देखते हुए उनकी अन्वाख्यान पद्धति को सहसा असम्बद्ध कहना दुस्साहस मात्र है।

तिबादि प्रत्ययों के साथ अनेक वैयाकरणिक प्रक्रियाएं जुटी हुई हैं, जो विस्तृत और स्वतन्त्र हैं। पूर्वोक्त लडादि प्रत्ययों के विकरणक्रम में तिबादि प्रत्ययों और तत्सम्बन्ध प्रक्रियाओं का उल्लेख करना अन्वाख्यानपद्धति को अनावश्यक रूप से जटिल और दुर्बोध बनाना होता । साथ ही साथ तिबादि प्रत्ययों के धारावाहिक विवरण में व्यवधान हो जाने से उस वर्ग के अन्य प्रत्यय व्यवच्छिन्न होते जाते, जिसके कारण उनकी सुबोधता और सम्बद्धता नष्ट हो जाती ।

यही कारण है कि सूक्ष्मेक्षी आचार्य पाणिनि ने लादेश तिबादि प्रत्ययों का तथा तत्सम्बद्ध प्रक्रियाओं का उल्लेख अनावश्यक विस्तार के साथ चतुर्थ पाद के अन्त में किया है। [18] ङ्यन्त आबन्त और प्रातिपदिक से होने वाले प्रत्ययों का अन्याख्यान चतुर्थ और पञ्चम अध्यायों में किया गया है।

प्रातिपदिक से होने वाले प्रत्ययों के दो भेद -

प्रातिपदिक रूप प्रकृति से सुप् और तद्धित- द्विविध प्रत्ययों का विधान किया गया है । **प्रातिपदिक** से टाबादि **स्त्रीप्रत्ययों का विधान होता है । ङ्यन्त और आबन्त से नहीं**[19] तथा सुप् और **तद्धितानामधेय**[20] प्रत्ययों का विधान ङ्यन्त आबन्त और प्रातिपदिक इन त्रिविध प्रकृतियों से होता है। इसलिए पाणिनि ने उपर्युक्त त्रिविध प्रकृतियों का विधान उल्लेख चतुर्थ अध्याय के प्रारम्भ में ही कर दिया है।

---

[9] अष्टा. 3/1/96, अष्टा. 3/1/98-105, अष्टा. 3/1/106-13, अष्टा. 3/1/124-131

[10] अष्टा. 3/4/70

[11] अष्टा. 3/4/67

[12] भावकर्मणोः कृत्याः विहिताः कारकान्तरेऽपि भवन्ति-स्नानीयं चूर्णम्, दानीयो विप्रः-का.3/3/113

[13] कालप्रकरणात् कालेन सामानाधिकरण्यार्थम्- उद्योग-3/3/131

[14] लिंगसंख्यान्वितं द्रव्यम्-व्याकरणशास्त्रासम्मत द्रव्यलक्षणम्

[15] क्रियाभेदाय कालस्तु-वा. प्र21. अष्टा.-3/3/1-2

[16] अष्टा. 3/3/3

[17] अष्टा.-3/4/18-12

[18] अष्टा.-3/4/78-117

[19] ङ्याप्प्रातिपदिकादिति सर्वाऽधिकारेऽपि प्रातिपदिकमात्राप्रकरणे सम्बध्यते, ङ्यापोरनेवने विधानात्-का.-4/1/3

[20] ङ्याबन्तात्तद्धितोत्पत्तिर्यथा स्यात् ङ्याब्भ्यां प्राङ्गाभूत् - सि.कौ.।

http://vidyajournal.org

VIDYA - A JOURNAL OF GUJARAT UNIVERSITY

Peer-Reviewed, Multidisciplinary & Multilingual Journal

ISSN: 2321-1520 **E-ISSN:** 2583-3537

अपि च स्त्रीप्रत्यय से पूर्व तद्धित का अनुशासन करने से ङीप्, ङीष् और ङीन् इन स्त्रीप्रत्ययों में **अतद्धिते - इस प्रतिषेध के कारण ङकार की इत्संज्ञा का निषेध किया जायेगा।**[21] तथा पट्वी में **'ओर्गुणः'** [22]सूत्र से गुण होने लग जायगा, जिससे उभयत्र-अकार होने लगेगा। उपर्युक्त कारणों से स्त्रीप्रत्ययों के अनन्तर ही तद्धित प्रत्यय का अनुशासन समीचीन है।

'समर्थानां प्रथमाद्वा'[23] से तद्धित प्रकरण प्रारम्भ होता है। कृत और तद्धित उभयविध प्रत्ययों से नाम अथवा प्रातिपदिक का निष्पादन होता है। ऐसी स्थिति में प्रातिपदिकनिष्पादक उभयविध प्रत्ययों का क्रमिक अनुशासन होना चाहिए था किन्तु पाणिनि ने ऐसा न करके दोनों का अन्य प्रत्ययों से व्यवहित और शासन किया है, जिसकी संगति पर आशंका की जा सकती है। किन्तु पाणिनिपद्धति के अध्येताओं को यह विदित है कि सूक्ष्मेक्षी आचार्य पाणिनि को प्रकरण योजना आपात्तः विशृंखल प्रतीत हुई भी वस्तुतः विशृंखल नहीं होती। इसलिए कृत् और तद्धित प्रत्ययों का पृथक् अध्यायों में उपन्यास भी निष्कारण नहीं हो सकता।

इस प्रसंग में ज्ञातव्य है कि कृत् और तद्धित उभयविध प्रत्ययों के प्रकृति में मौलिक भेद हैं। **तथा तद्धित में प्रायः सभी उत्सर्गापवाद विकल्प से होते हैं तथा वहाँ प्रकृति प्रकृत्यर्थ में रहती है और शब्दान्तर से प्रत्ययार्थ में विद्यमान नहीं रहती।**[24] यही कारण है कि कृत् प्रत्ययों के बाद तद्धित प्रत्ययों का अन्वाख्यान किया गया है। वैयाकरणनिकाय से **'कृद्वृतोस्तद्धितवृत्तिर्बलीयसी'** का सिद्धांत मान्यता प्राप्त है। इसलिए तद्धित की अपेक्षित बलवत्ता के द्योतन के लिए भी सूत्राकार ने कृत् प्रत्यय के बाद तद्धितप्रत्यय का अनुशासन किया है।

उपसंहार तथा लाभनिरूपण ।

- इस संशोधन से व्याकरणजिज्ञासुओं को सभी प्रत्ययों का संज्ञान होगा। तथा उससे निर्मित शब्दों का परिज्ञान होगा।
- इस संशोधन से यह सिद्ध होता है कि व्यवहार में अर्थपूर्ण शब्दों का प्रयोग करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है।
- नामादि को प्रत्यय लगाकर उनका धातु के जैसा प्रयोग करने का सामर्थ्य लाभ होता है।
- संशोधनमें प्रयुक्त ग्रन्थों के प्रति विद्यार्थियों की जिज्ञासा बढेगी।
- व्याकरण के प्रत्ययसम्बन्धी भीति दूर होगी। इत्यादि...

संदर्भग्रन्थ

1. अष्टाध्यायी- श्री वेङ्कटेश्वर मुद्रणालय मुम्बई- संवत्-1954
2. वैय्याकरणसिद्धान्तकौमुदी - चौखम्बा संस्कृत पुस्तकालय -2020
3. काशिकावृत्तिः - तारा पब्लीकेशन्स ,वाराणसी- 1967
4. लघुसिद्धान्तकौमुदी - भारतीय विद्यासंस्थान वाराणसी – 2017
5. वाल्मीकिरामायणम् - श्रीहरिकृष्णनिबन्धभवनम् बनारस सीटि -1991
6. महाभारत - गीता प्रेस गोरखपुर गोविन्द कार्यालय 20 दिसम्बर-2017
7. अष्टाध्यायीप्रयोगदीपिका- इंडियन मैप सर्विस, पुष्करक्षेत्र जोधपुर- राजस्थान -वि.सं. 2062
8. गणपाठ - भारतीय प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान अजमेर- 2018
9. महाभाष्यम् - डेक्कन एज्युकेशन सोसायटी पुणे- सन्- 1963 ई.
10. वाचस्पत्यं – मदनमोहन झा , GOOGLE PLAYSTORE APP
11. शब्दकल्पद्रुमः - मदनमोहन झा , GOOGLE PLAYSTORE APP
12. https://ashtadhyayi.com/

[21] लशक्वतद्धिते। अष्टा. 1/3/8

[22] इह च पट्वीति 'ओर्गुणः' इति गुणः तस्माद् यथान्यासमेवास्तु - न्यास-4/1/76

[23] अष्टा. 4/1/82

[24] तद्धिते च सर्वमेवोत्सर्गापवादं विभाषा उत्पद्यते....प्रकृतिस्तत् प्रकृत्यर्थे वत्तते, अन्येन च शब्देन प्रत्ययार्थोऽभिधीयते।इह पुनर्न केवला प्रकृतिः प्रकृत्यर्थे वर्तते। -महाभारत-3/1/94

http://vidyajournal.org